Chapter-4

चतुर्थ अध्याय

बंगाल में व्हायोलिन वादन के क्षेत्र में गायकी अंग एवं गत्‌कारी अंग का प्रभाव तथा पाँच तारवाले व्हायोलिन का निर्माण ।

गायकी अंग तथा गत्कारी अंग का प्रभाव

अंग्रेज़ों ने सन् 1757 में प्लासी की लढ़ाई जीत कर बंगाल में, या कहे तो हिन्दुस्तान में अपने स्वतन्त्र राज्य की नींव डाली। इसके साथ ही बंगाल में अंग्रेज़ों का आना-जाना शुरू हुआ व उनकी भाषा, रहन-सहन, संस्कृति, कला आदि का प्रभाव बंगाल पर पड़ने लगा। उनके संगीत के साथ उनके वाद्य यन्त्र भी बंगाल आये। इन्ही वाद्य यन्त्रों में व्हायोलिन एक प्रमुख वाद्य था जिसने बंगाल के संगीतकारों को बहुत प्रभावित किया। व्हायोलिन के पूर्व बंगाल के संगीतज्ञ सारंगी, इसराज, सुरसोटा, दिल़रूबा आदि गज़ से बजनेवाले वाद्यों से भलि-भाँति परिचित थे। व्हायोलिन नाम का नया गज़ वाद्य हिन्दुस्तानी (भारतीय) संगीत की समस्त विशेषताओं को प्रभावी ढंग से व्यक्त करनेवाला एक विदेशी, परन्तु सम्पूर्ण वाद्य बनने जा रहा था।

कोई भी स्वर वाद्य (तन्त्री वाद्य) बजाने के लिए वाद्यगत तकनीक के साथ स्वर बजाने की प्रक्रिया एवं स्वर ज्ञान प्राप्त करने के लिए विभिन्न स्वरालंकारो का (पलटे) कठिन अभ्यास आवश्यक है। व्हायोलिन पर पाश्चात्य संगीत के स्वर c, d, e, f, g, a, b के स्थान पर भारतीय संगीत के सा, रे, ग, म, प, ध, नि इन स्वरों को बजाने के सफल प्रयास के बाद स्वरालंकारों का अभ्यास शुरू होकर कुछ हलका-फुलका हिन्दुस्तानी संगीत बजने लगा।

अन्य हिन्दुस्तानी संगीत के तन्त्री वाद्यों पर वादन सामग्री सामान्य रूप से व परम्परानुसार निश्चित थी। जैसे - वीणा, सुरबहार आदि वाद्यों पर राग के आलाप, जोड़ आलाप, ध्रुपद अंग की बन्दिशें आदि। सितार, सरोद आदि वाद्यों पर आलाप-जोड़-झाला के बाद मसीतखानी (विलम्बित) व रजाखानी (मध्य-द्रुत) गतें, सारंगी, दिलरूबा आदि वाद्य गायन व गायकी के अन्य प्रकारों के साथ संगत करने के लिए ही उपयोग में लाये जाते थे। इसराज, सुरसोटा आदि वाद्य, बंगाल में प्रचलित व लोकप्रिय रवीन्द्र संगीत का एक आवश्यक अंग माना जाता है। इस प्रकार दर एक हिन्दुस्तानी संगीत के तन्त्री वाद्यों की वादन सामग्री निश्चित थी। व्हायोलिन के लिए ऐसी कोई स्वतन्त्र वादन सामग्री का निर्माण करना आवश्यक था।

हिन्दुस्तानी संगीत के अन्य गज़ वाद्यों की वादन तकनीक से व्हायोलिन की वादन तकनीक सर्वथा भिन्न है। सारंगी, इसराज, दिलरूबा आदि वाद्य ज़मीन पर बैठकर व उनकी बनावट के आधार पर उनका गज़ संचालन वाद्य के निचले भाग में घुड़च के पास किया जाता है तथा स्वर वाद्य के ऊपरी हिस्से में बजाये जाते है। स्वरों का आरोही क्रम वाद्य के ऊपरी हिस्से से नीचे की ओर व अवरोही क्रम नीचे से ऊपरी हिस्से की ओर होता है।

व्हायोलिन यह पाश्चात्य वाद्य है तथा उसको खड़े होकर बजाया जाता है। चिन रेस्ट पर ठुड्डी रखकर, ज़मीन को समान्तर रखते हुए बाये हाथ से नेक पकड़कर व दाहिने हाथ में गज़ पकड़कर गज़ को तारों पर खड़े रखते हुए चलाना यह प्रक्रिया हिन्दुस्तानी संगीत के लिए असुविधाजनक लगती है। पाश्चात्य पद्धति से व्हायोलिन के चार तार मिलाकर (G D A E) हिन्दुस्तानी सुगम संगीत का फ़िल्मी संगीत बजानेवाले कलाकार तो है, परन्तु हिन्दुस्तानी राग-संगीत या कहे तो हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत बजाने के लिए ज़मीन पर बैठकर और तन्त्रियों को प़ सा प सां या सा़ प़ सा प इस पद्धति से मिलाकर बजाना सर्वोपयुक्त माना गया। व्हायोलिन पर स्वरों का आरोही क्रम (नीचे से ऊपर) व अवरोहीक्रम (ऊपर से नीचे) रहता है, जो अन्य हिन्दुस्तानी वाद्यों के विपरीत लगता है।

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत बजाने के लिए ज़मीन पर बैठकर व्हायोलिन की बैठक तैयार करने पर ही काफी विचार, प्रयोग किए गए होंगे। व्हायोलिन पर सर्वप्रथम हिन्दुस्तानी संगीत बजानेवाले पं. गगन बाबू किस प्रकार से व्हायोलिन बजाते थे, चार तार कैसे मिलाते थे, बैठकर बजाते थे या किसी अन्य प्रकार से, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। फिर भी व्हायोलिन की बढ़ती लोकप्रियता के साथ-साथ बंगाल में वादकों की संख्या में वृद्धि होकर, ज़मीन पर बैठकर ही हिन्दुस्तानी राग-संगीत बजना शुरू हुआ व वादन सामग्री निश्चित नहीं होने के कारण अधिकांश व्हायोलिन वादक व्हायोलिन पर सितार-सरोद की तरह आलाप, जोड़, मसीतखानी, रज़ाखानी गतें व तान-तोड़े के साथ झाला बजाने में रूचि रखने लगे। यहाँ परम्परा आगे चलती रही व इस गत्‌कारी शैली से बजानेवाले व्हायोलिन वादक बंगाल में काफी लोकप्रिय हुए। बंगाल के अतिरिक्त बाकी सब जगह उत्तर हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में व्हायोलिन वादन विधि इसी प्रकार चलती रही। बंगाल में वाद्य-संगीत का व अन्य प्रदेशों में गायन का प्रभाव शुरू से अधिक रहा है।

समय के साथ कर्नाटक संगीत में व्हायोलिन बजाने की पद्धति ने हिन्दुस्तानी संगीत के व्हायोलिन वादन पर प्रभाव डाला व व्हायोलिन पर गायकी अंग यह एक महत्त्वपूर्ण कड़ी जुड़ गई। वर्तमान में हिन्दुस्तानी संगीत व कर्नाटक संगीत यह नाम अप्रचलित होकर उनकी जगह उत्तर भारतीय संगीत व दक्षिण भारतीय संगीत यह नाम ज्यादातर प्रचलित हो गए है। अतः उत्तर भारत में बंगाल भी आ गया। कुछ कर्नाटक संगीत के व्हायोलिन वादक, कर्नाटक संगीत के साथ-साथ उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत भी बजाने में सिद्धहस्त है। कर्नाटक (दक्षिण भारतीय) संगीत में व्हायोलिन के साथ अन्य सभी तन्त्र वाद्यों पर गायकी बजाने की परम्परा शुरू से ही रही है। राग की विशेषताओं जैसे - मीण्ड, सूत, गमक आदि का प्रयोग सर्वप्रथम दक्षिंण के वादकों ने ही किया और उससे प्रभावित होकर उत्तर के व्हायोलिन वादकों ने अपने वादन में उस तकनीक को अपनाकर उत्तर भारतीय राग-संगीत में व्हायोलिन वादन का स्तर ऊँचा किया।

बंगाल में भी व्हायोलिन वादन में परिवर्तन होकर, गायकी अंग को भी अपनाया गया, परन्तु व्हायोलिन वादन यदि एकांगी हो जाय तो उस वाद्य की क्षमता व सम्पूर्णता कुण्ठित होने का भय उपस्थित होने के कारण व्हायोलिन में एक तार बढ़ाकर पाँच तार का वाद्य तैयार करने की प्रक्रिया शुरू हुई। आज बंगाल में चार व पाँच ऐसे दोनों प्रकार के व्हायोलिन निर्माण करने का कार्य हो रहा है। गायकी अंग व गत्कारी अंग इन दोनों शैलियों के साथ-साथ गायकी व गत्कारी अंगों का सुन्दर समन्वय साधकर व इसके लिए पाँच तारों का वाद्य उपयोग में लाकर बंगाल के कलाकार प्रसिद्ध व लोकप्रिय हुए है।

बंगाल में शुरू-शुरू में जिन लोगों ने व्हायोलिन वादन किया उन में पाश्चात्य संगीत का अभ्यास करके व पाश्चात्य पद्धति से तारों को G D A E (म़ सा प रें) मिलाकर, खड़े होकर या बैठकर Head (scroll) को हवा में रखकर बजानेवाले ही अधिक थे। गज़ संचालन भी पाश्चात्य ढंग का ही रहा होगा। हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत छोड़कर अन्य किसी भी प्रकार के संगीत को बजाने के लिए यह पद्धति सर्वमान्य है। आज भी शास्त्रीय संगीत को छोड़कर, लोक-संगीत, सुगम-संगीत, फिल्मी-संगीत आदि बजानेवाले अधिकांश व्हायोलिन वादक पाश्चात्य ढंग से ही बजाते है, परन्तु हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत याने राग-संगीत सम्पूर्ण विश्व में अपना स्वतन्त्र स्थान रखता है, और उसे बजाने के लिए पाश्चात्य पद्धति

कितनी उपयुक्त या अनुपयुक्त है इस पर काफी सोच-विचार के बाद व्हायोलिन वादन के लिए भारतीय ढंग तैयार हुआ। ज़मीन पर बैठकर, एक पैर आगे बढ़ाकर, पैर की एड़ी पर Head (scroll) को रखकर, टेल-पीस तरफ के हिस्से को गरदन का आधार देकर एक सुविधाजनक बैठक तैयार हुई। चार तारों को मिलाने की प्रक्रिया भी म़ सा प रें से म़ सा प सां, प़ सा प सां, सा़ प़ सा प इस प्रकार संक्रमित होकर राग-संगीत बजाने के लिए चार तारों को मिलाने की एक सामान्य पद्धति प्रचार में आयी। इस सम्पूर्ण संक्रमण का ऐतिहासिक विवरण एक खोज का विषय हो सकता है।

प़ सा प सां इस पद्धति में दरबारी कानड़ा-पुरिया जैसे रागों का विस्तार मन्द्र-सप्तक में होना सम्भव नहीं अतः मन्द्र-पंचम को एक स्वर उतारकर मन्द्र-मध्यम में मिलाकर म़ सा प सां यह पद्धति कुछ बंगाल वादक आज भी अपनाते हुए दिखाई देते हैं, परन्तु केवल मन्द्र-मध्यम (शुद्ध या तीव्र) तक जाने से भी ऊपर उल्लिखित रागों का मन्द्र-विस्तार कुण्ठित ही रहता है, गायकी अंग की दृष्टि से बंगाल के वादकों ने प़ सा प सां के अतिरिक्त मन्द्र-सप्तक के षड़ज की एक तार की कल्पना की होगी। सा़ प़ सा प इस पद्धति का दक्षिण के व्हायोलिन वादक सामान्य रूप से (common) पालन करते हुए दिखाई देते है। उनका वादन पूर्ण रूप से गायकी अंग से ही होता है। मध्य-पंचम की तार पर तार-सप्तक के स्वर बजाने में थोड़ी कठिनाई होती है, परन्तु उन्होंने पाश्चात्य पद्धति की shifting of key (अंगुलियों का स्थानान्तरण) पद्धति से वह कठिनाई दूर की है। हिन्दुस्तानी संगीत में गायकी व गत्‌कारी यह दो अंग प्रमुख है। इन दोनों अंगों का प्रदर्शन विस्तार से व सरलता से करने की दृष्टि से मन्द्र-सप्तक के षड़ज की एक अतिरिक्त तार लगाकर सा़ प़ सा प सां इस प्रकार पाँच तारों की कल्पना बंगाल के वादकों ने ही की होगी। तभी तो बंगाल के व्हायोलिन वाद्य-निर्माता चार तथा पाँच तारों के वाद्य बनाते है। पाँच तारों का उपयोग करते हुए गायकी अंग के साथ गत्‌कारी अंग से, जिसमें आलाप, जोड़-आलाप, झाला, मसीतखानी गत्, रज़ाखानी गत्, तान-तोड़ा, चक्रदार, तिहाइया आदि गत्‌कारी के महत्त्वपूर्ण अंग होते है। व्हायोलिन वादन की परम्परा बंगाल में दिखाई देती है।

इस प्रकार बंगाल के व्हायोलिन वादकों पर गायकी अंग व गत्‌कारी अंग दोनों का प्रभाव है, फिर भी पाँच तारों का उपयोग करके गत्‌कारी अंग पर ज्यादा जोर देकर बंगाल के व्हायोलिन वादक प्रभावपूर्ण वादन करते है।

पाँच तारवाले व्हायोलिन का निर्माण

बंगाल में चार तारवाले व्हायोलिन से साथ-साथ पाँच तारवाले व्हायोलिन का प्रयोग भी दृष्टिगोचर होता है। इसका प्रयोग विशेष रूप से शास्त्रीय संगीत में ही अधिक देखा जाता है। वहाँ इसका निर्माण भी काफी होता है। प्राय: सभी वाद्य-निर्माता चार तार के साथ-साथ पाँच तारवाले व्हायोलिन का निर्माण विषयक ज्ञान रखते हैं। इसके निर्माण के विषय में भिन्न-भिन्न मत पाए जाते हैं।

"प्रारम्भ में (ई. सन् 1510-1530) व्हायोलिन में तीन तार लगाये जाते थे। पूर्व में सभी तार ताँत के प्रयुक्त किए जाते थे। 17वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से 'जी' (G) तार पर एल्युमिनियम का वायर लपेटना प्रारम्भ हुआ। आज-कल केवल 'ई' (E) तार को छोड़कर सभी तारों पर एल्युमिनियम का तार लपेटा जाता है। ताँत के तार लगाना प्राय: अब समाप्त हो गया है। 'ई' (E) तार स्टील का लगाया जाता है"।[1]

पाश्चात्य देशों में सामान्य रूप से तारों की संख्या चार रखते हैं। जिन्हें 'जी' (G), डी (D), ए (A), ई (E)' स्वरों में मिलाते हैं। किन्तु "क्युनटोन (QUINTON) नामक फ्रेंच व्हायोलिन में पाँच तारों का प्रयोग देखने में आता है, जिसे - जी (G), डी (D), ए (A), डी (D), जी (G) स्वरों में मिलाते हैं"।[2] भारत में सामान्य रूप से तारों की संख्या चार ही रखते हैं, किन्तु आज-कल पाँच तारो का व्हायोलिन भी प्रचार में आ गया है। विशेषकर बंगाल प्रदेश में प्राय: सभी कलाकार शास्त्रीय वादन के लिए पाँच तारवाले व्हायोलिन का प्रयोग करते हैं।

पाँच तारवाले व्हायोलिन के निर्माण विषयक अनेक मत पाए जाते हैं। कहा जाता है कि, "कर्नाटक के श्री रत्नाकर भट्टी गुलवाडी ने सर्वप्रथम पाँच तार का व्हायोलिन बनाया। उन्होंने पाँचवे तार को तार-सप्तक के स्वर में मिलाया। उत्तर भारत में भी कुछ कलाकार अपने व्हायोलिन में पाँचवा तार लगाते हैं"।[3]

बंगाल में पाँच तार के व्हायोलिन का अधिक प्रयोग देखा जाता है एवं कलाकार पाँचवे तार को मन्द्र-सप्तक के षड़ज स्वर में मिलाते हैं। उल्लेखनीय है कि पं. वी. जी. जोग भी इसी प्रकार से अपने व्हायोलिन को पाँचवे तार में मिलाते थे।

वर्तमान में पाँच तार के साथ व्हायोलिन में तरबें लगाई जाती हैं। इस विषय पर भी भिन्न मत हैं। जो तथ्य प्राप्त होता है उससे यह कहा जा सकता है कि "सन् 1942 के लगभग लखनऊ में अपने निवासकालीन समय में पं. वी. जी. जोग ने व्हायोलिन में तरबें लगाईं, जिसे उन्होंने 'माइक्रोटन' नाम दिया है, किन्तु उनका यह प्रयोग विशेष सफलता प्राप्त नहीं कर पाया"।[4] "दक्षिण के मैसूर चौड़प्पा ने भी व्हायोलिन में 12 तरबें लगाई थीं, परन्तु यह भी सफल नहीं हुआ। परवर्ती में पं. वी. जी. जोग जो तरब युक्त व्हायोलिन का प्रयोग करते थे, वह उन्होंने विदेश से मंगवाया था। व्हायोलिन के आकार को बड़ा कर एवं उसमें परिवर्तन कर तरबें लगाने का सफल प्रयोग श्री कुँवर राजेन्द्र सिंह ने किया जिसे वे 'स्वरलीन' नाम से सम्बोधित करते हैं। वे इसका प्रयोग फ़िल्म संगीत में विशेष रूप से करते हैं"।[5]

बंगाल प्रदेश के कोलकाता शहर के विख्यात वाद्य-निर्माणागार हैं 'मनोज कुमार सर्दार एण्ड ब्रदर्स'। इस निर्माणागार की प्रतिष्ठा लगभग सौ साल पहले हुई थी। वर्तमान में इस निर्माणागार का कर्णधर हैं श्री मनोज कुमार सर्दार। व्हायोलिन में पाँचवा तार युक्त करने के विषय में उनका कहना हैं कि, "आज से 50 साल पहले मेरे चाचा स्वर्गीय ललितमोहन सर्दार ने पण्डित वी. जी. जोग तथा अन्य प्रसिद्ध कलाकारों के कहने पर व्हायोलिन में पाँचवा तार (मन्द्र-षड़ज का तार) युक्त करने का कार्य किया ता कि इसमें पूरे मन्द्र-सप्तक के स्वरों को निकाला जा सके। बंगाल के व्हायोलिन वादक उस काल में म़ (मन्द्र), सा (मध्य), प (मध्य), रें (तार) तथा प़ (मन्द्र), सा (मध्य), प (मध्य), सां (तार) स्वरों में ही व्हायोलिन के तारों को मिलाते थे। इसलिए इसमें पूरे मन्द्र-सप्तक का प्रयोग नहीं किया जा सकता था, किन्तु भारतीय शास्त्रीय संगीत में कुछ रागों की खास विशेषताएँ मन्द्र-सप्तक में ही प्रकट होती हैं। इन्हीं विशेषताओं को सफलता के साथ प्रकट करने के उद्देश्य से उन्होंने व्हायोलिन में पाँचवा तार लगाने का कार्य किया। इस तार को 'सी' (C) नाम दिया गया। पाँच तारवाले व्हायोलिन का प्रयोग अन्य प्रदेशों की तुलना से बंगाल, असम और बिहार में ही अधिक होता है। चार तारवाले व्हायोलिन की माँग मुम्बई, मद्रास आदि शहरों में अधिक है, परन्तु इसका निर्माण कोलकाता में ही ज्यादा और उत्कृष्टता से होता है। कोलकाता से चार तारवाले व्हायोलिन सिर्फ भारत के अन्य प्रदेशों में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी लोग ले जाते हैं। हमें आशा है कि भविष्य में भारत के अन्य प्रदेशों तथा विदेशों में पाँच तारवाले व्हायोलिन के प्रयोग में भी लोग रूचि रखेंगे"।[6]

कोलकाता का एक और विख्यात वाद्य-निर्माणागार है 'एन. एन. मण्डल एण्ड सन्स'। इस निर्माणागार की प्रतिष्ठा सन् 1890 में श्री केदारनाथ मण्डल के द्वारा हुई थी जो नगेन्द्रनाथ मण्डल (एन. एन. मण्डल) के पिता थे। पिता की मृत्यु के बाद भी नगेन्द्रनाथ मण्डल ने इस निर्माणागार को आगे बढ़ाया तथा विभिन्न प्रकार के संगीत वाद्यों के निर्माण में विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की। देशी वाद्यों के साथ-साथ विदेशी वाद्यों के निर्माण में भी उन्होंने सफलता प्राप्त की। उनमें व्हायोलिन एक उल्लेखनीय वाद्य है। उल्लेखनीय है कि विदेशी व्हायोलिन वादकों में जी Yahudi Menuhin, Jigmond (Germany), J. K. Stan (Russia) आदि सुप्रसिद्ध वादकों ने उनसे व्हायोलिन की मराम्मत कराकर सन्तुष्ट हुए। नगेन्द्रनाथ मण्डल के पाँच पुत्र में से श्री कृष्णचन्द्र मण्डल एवं सुदामचन्द्र मण्डल ने वाद्य-निर्माण में विशेष ख्याति अर्जित की। पाँच तारवाले व्हायोलिन निर्माण के सम्बन्ध में श्री कृष्णचन्द्र मण्डल का कहना है कि, "मेरे दादा श्री केदारनाथ मण्डल के समय से यहाँ व्हायोलिन का निर्माण आरम्भ हुआ, परन्तु मेरे पिता श्री एन. एन. मण्डल ने इस वाद्य के निर्माण को सफलता से आगे बढ़ाया। परवर्ती में चार तार के साथ-साथ पाँच तारवाले व्हायोलिन का निर्माण भी यहाँ होने लगा। व्हायोलिन में पाँचतार लगाकर भारतीय संगीत के लिए किस प्रकार से वाद्य की Tonal quality को ठीक रखा जा सके इस विषय पर अनेक व्हायोलिन वादकों ने सोचा। इनमें से प्रसिद्ध व्हायोलिन वादिका प्रो. शिशिरकणा धर चौधुरी ने सन् 1960-1970 के लगभग श्री एन. एन. मण्डल के साथ इस विषय पर विचार-विनिमय किया तथा उन्हें प्रेरणा प्रदान की। इनसे प्रेरित होकर श्री एन. एन. मण्डल ने सर्वप्रथम जिस पाँच तारवाले व्हायोलिन का निर्माण किया था उससे शिशिर जी बहुत ही सन्तुष्ट हुयीं। तत्पश्चात् उस्ताद अली अकबर खाँ के कहने पर सन् 1974 में उन्होंने इसमें पाँच तरबें लगायीं, परन्तु इससे खाँ साहब एवं निर्माता दोनों ही अधिक सन्तुष्ट नहीं थे। सर्वप्रथम श्री एन. एन. मण्डल ने जिस प्रकार से पाँच तरबों को प्रयुक्त किया था उसमें उन्होंने कोई ब्रिज का उपयोग नहीं किया। टेल-पीस में पाँच अतिरिक्त एडजस्टर लगाकर ब्रिज में पाँच छेद करके उन छेदों के माध्यम से फिंगर बोर्ड के नीचे से पैग बाक्स में पाँच और पैग्स युक्त कर तरबें लगाईं। परन्तु इस प्रयास में सन्तुष्ट न होने के कारण परवर्ती में उन्होंने सा, रे, ग, म. प, ध, नि इस प्रकार से सात तरबें लगाईं । इन्हें सफल रूप देने के लिए मूल पाँच

एडजस्टर के साथ अतिरिक्त और सात एडजस्टर (जो मूल एडजस्टर से आकार में छोटे होते हैं) को लगाया जिसके लिए टेल-पीस (तन्त्री धारक) की चौड़ाई को बढ़ाना पड़ा। तरबों को बैठाने के लिए मूल ब्रिज के सामने हड्डी का एक छोटा पतला ब्रिज लगाया एवं मूल पैग बाक्स के नीचे एक अतिरिक्त छोटा पैग बाक्स लगाकर उसमें सात पैग्स के साथ तरबों को युक्त किया। टेल-पीस से पैग बाक्स तक तरबों को ले जाने के लिए फिंगर बोर्ड के नीचे मछली आकृति का एक हड्डी का बोर्ड लगाया। तत्पश्चात् सात तरबों को टेल-पीस के सात अतिरिक्त एडजस्टर के साथ युक्त कर मूल ब्रिज के नीचे से तरबें को निकालकर हड्डी के ब्रिज में से फिंगर बोर्ड के नीचे लगाये। हड्डी के बोर्ड की सहायता से उन अतिरिक्त छोटे पेग्स के साथ जोड़ दिया। उनका यह प्रयास सफल हुआ तथा उसने अनेक प्रसिद्ध वादकों से प्रशंसा प्राप्त की। वर्तमान में हमनें इसमें और एक अतिरिक्त तरब लगाकर कुल आठ तरबों प्रयुक्त किया। इस सम्पूर्ण प्रयास के फलस्वरूप व्हायोलिन की ध्वनि उत्कर्षता में उन्नति हुई तथा आवाज़ में जिस प्रकार ध्वनि तरंगों की सृष्टि हुई वो बहुत ही कर्णप्रिय है, जो उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत वादन के लिए अधिक उपयुक्त कहा जा सकता है। हमने इसका नया नामकरण 'व्हायोलिना' किया है। तरबों को अन्य तरबयुक्त वाद्य के समान ही राग-रूप के अनुसार मिलाया जाता है। अब इसमें 13 तरबें प्रयुक्त करने की खोज में है, जिससे वाद्य का स्वर कम्पन और बढ़ेगा, यह आशा है। चार तारवाले व्हायोलिन में भी आठ तरबें युक्त करने का प्रयास चल रहा है"।[7]

पाँच तारवाले व्हायोलिन के सम्बन्ध में प्रसिद्ध व्हायोलिन वादक तथा निर्माता प्रों. रॉबीन घोष कहते है, "व्हायोलिन वाद्य की मुख्य सम्पदा है चार तन्त्रीयाँ और चार अंगुलियाँ। इतनी ही सम्पदा को लेकर इस वाद्य ने सम्पूर्ण विश्व को जय किया है। वैज्ञानिक रूप से निर्माण के कारण ही केवल यह सम्भव हुआ है। किसी भी निर्माण या सृजन के लिए कार्यकुशलता जरूरी है। व्हायोलिन निर्माण के सम्बन्ध में मुझे मेरे पाश्चात्य गुरू से शिक्षा तथा कुशलता प्राप्त हुई थी। इस वाद्य में पंचम तार प्रयुक्त करने के लिए यही कुशलता को मैने प्रयोग किया है। इस कार्य के लिए सर्वप्रथम मेरे परम गुरू बाबा अलाउद्दीन खाँ साहब से प्रेरणा तथा आदेश मिली थी। बाबा अनेक वाद्यों के कुशल सृजक थे। शिक्षा प्राप्ति के काल में एक दिन उन्होंने मुझे एक राग में मन्द्र-सप्तक के रिषभ, गन्धार, मध्यम आदि स्वरों के महत्त्व को समझाया। मेरे व्हायोलिन में अन्तिम मन्द्र स्वर था मध्यम। उन्होंने कहा भारतीय

शास्त्रीय रागों में कुछ रागों का वैशिष्ट्य यही है कि उन्हें मन्द्र-सप्तक में ही प्रकट किया जाए। मन्द्र-सप्तक के बिना उन रागों को प्रकृत रूप से सम्पन्न नहीं किया जा सकता है। अतः पूरे मन्द्र-सप्तक के लिए व्हायोलिन में एक अतिरिक्त तार प्रयुक्त हो सकता है या नहीं इस विषय पर खोज करने की आवश्यकता है। तत्पश्चात् बाबा के आदेशानुसार इस वाद्य में एक अतिरिक्त तार युक्त करने का कार्य आरम्भ किया। कहना उचित होगा कि ध्वनि तरंग के वैज्ञानिक परीक्षण से मुझे यह अनुभव हुआ कि सामान्य रूप से व्हायोलिन के अन्दर और बाहर निकालकर लकड़ी के कुल 72 टुकड़े होते हैं। उन 72 टुकड़ों को जिस प्रकार से सज्जित किया जाता है वो वैज्ञानिक रूप से चार तारवाले व्हायोलिन के लिए ही उपयुक्त है। इसलिए व्हायोलिन में पाँचवा तार प्रयुक्त करने के लिए उसमें बेसबार, साउण्ड पोस्ट, मैन ब्लॉक्स आदि अवयवों में परिवर्तन लाना जरूरी है। मन्द्र-सप्तक के लिए जिस प्रकार गम्भीर आवाज़ की आवश्यकता होती है उसे यथायथ रूप से प्रकट करने के लिए बेसबार, साउण्ड पोस्ट एवं ब्रिज आदि का परीक्षण की आवश्यकता हुई। पाँचवे तार को मन्द्र-सप्तक का उपयोगी बनाने के लिए तथा अन्य तारों से समन्वय बनाये रखने के लिए साउण्ड पोस्ट का आकार तथा बेसबार सम्बन्धित परीक्षण ही मुख्य है। यह परीक्षण अगर सफल हुआ तो स्वरों में एक प्रकार का मेलबन्धन रचित होता है, जो अधिक श्रुतिमधुर लगता है। व्हायोलिन में Hard tone, Loud tone, Soft tone यह तीन प्रकार के टोन होते हैं। इसकी और एक प्रकार टोन है जिसे हम Normal tone कहते है। इसमें विशेष कोई वैशिष्ट्य न रहते हुए भी एक प्रकार की मिठास रहती है। वो साधारण वर्ग में आता है। सबसे जरूरी बात यह है कि सभी व्हायोलिन में पंचम तार प्रयुक्त नहीं किया जा सकता। ब्रिज चयन तथा ब्रिज की उँचाई, साउण्ड पोस्ट जो व्हायोलिन का स्वास है उसका लकड़ी तथा आकार बेसबार से ट्रे'बॅल बार तक का संयोजन जिन Grain lines के द्वारा किया जाता है उसका माप आदि का यथेष्ट ज्ञान होना इस विषय के लिए अति आवश्यक है। अन्यथा अच्छे व्हायोलिन भी बिगड़ने की सम्भावना है। सन् 1957-1958 में मैं मेरे प्रिय फ्रेंच व्हायोलिन को पाँच तारवाले व्हायोलिन का रूप देने में सफल हुआ, जो अब तक अधिक मधुरता से बजता है। इस सफलता से बाबा बहुत ही प्रसन्न हुए थे। तत्पश्चात् सन् 1960 में 'तानसेन सगीत सम्मेलन' में सर्वप्रथम इस व्हायोलिन का प्रचलन किया, जिससे श्रोताओं को भी अधिक मनोरंजन प्राप्त हुआ। परवर्ती में मैने जर्मन, अमरीका, इंग्लैण्ड आदि देशों में भी इस व्हायोलिन के द्वारा अनेक कार्यक्रम प्रस्तुत किए" ।[8]

"व्हायोलिन में पाँचवा तार युक्त करने के विषय में सर्वप्रथम पाश्चात्य विद्वान Paganini (प्रसिद्ध व्हायोलिन वादक तथा रचनाकार) का नाम पाया जाता है, परन्तु वे अपने प्रयास से सन्तुष्ट न होकर इस कार्य से दूर रहे"।[9]

अन्त में यह कहा जा सकता है कि व्हायोलिन में उत्तर भारतीय संगीत को परिपूर्ण रूप से प्रकट करने के लिए पाँचवा तार प्रयुक्त करने की कल्पना उस्ताद अलाउद्दीन खाँ साहब ने की थी और उसे सफल रूप देने में बंगाल के अनेक विद्वानों ने प्रयास किया। जिनमें प्रो. रॉबीन घोष, श्री नगेन्द्रनाथ मण्डल, श्री ललितमोहन सर्दार आदि का नाम लिया जा सकता है।

व्हायोलिन में पंचम तार को मन्द्र-सप्तक के लिए प्रयुक्त करने में इसके शरीर के अन्दर कुछ अंशों के माप का किंचित परिवर्तन किया जाता है। यह परिवर्तन प्रधानतः बेसबार, साउण्ड पोस्ट, नेक ब्लॉक आदि में होता है। इन सभी अंशों के माप व्हायोलिन की निर्माणानुसार होता है। इनमें जिस अंश को मुख्य रूप से परिवर्तन किया जाता है वो है बेसबार। यह पाईन लकड़ी से बनी हुई एक पट्टी होती है। इसके दो मुख्य उद्देश्य हैं। एक वक्ष को मजबूत बनाना तथा दूसरा मन्द्र-सप्तक के स्वरों की ध्वनि का अन्य स्वरों से सामंजस्य बनाये रखना। इसलिए इसे बेसबार कहते हैं। यह 'जी' (G) तार के समानान्तर ब्रिज के पाए के नीचे अन्दर की ओर होता है। दोनों कोनों की ओर यह पतला रखते हैं। इसके बीचवाला भाग ब्रिज के पास होता है। व्हायोलिन में पंचम अर्थात् 'सी' (C) तार (मन्द्र-सप्तक के लिए) प्रयुक्त करने के लिए चार तारवाले व्हायोलिन की तुलना से इसकी लम्बाई, चौड़ाई, मोटाई आदि को बढ़ाना अति आवश्यक है।

साउण्ड पोस्ट व्हायोलिन के अन्दर का दूसरा महत्त्वपूर्ण भाग होता है, जो बेसबार के विपरीत प्रान्त में रहता है। यह पाईन की लकड़ी का ठोस तथा गोलाकृति का बनाया जाता है। इसे वक्ष और पीठ के मध्य ब्रिज के दाहिने पैर के नीचे थोड़े से टेल-पीस की ओर हटकर खड़ा लगाते हैं। अपने नियत स्थान से थोड़ी सी भी हटने से ध्वनि में अत्यन्त बदलाव आ जाता है। साउण्ड पोस्ट के अभाव में व्हायोलिन की ध्वनि गुंगी अर्थात म्यूट लगाने पर जिस प्रकार आती है, वैसी हो जाती है। इसकी दो उपयोगिताएँ है, एक तो ध्वनि तरंगों में निरन्तरता बनाये रखना तथा दूसरी तारों का दबाव जो ब्रिज के माध्यम से बेली पर आता है,

उससे बचाये रखना। इसलिए इसे बैठाने का सही स्थान एवं माप की ओर अधिक ध्यान रखा जाता है। व्हायोलिन में पाँचवा तार युक्त करने के लिए इसमें किंचित परवर्तिन आ सकता है।

व्हायोलिन के नेक या गर्दन की ब्लॉक जो शरीर के अन्दर रहता है, उसे थोड़ा बड़ा किया जाता है। फिंगर बोर्ड जो नेक के ऊपरी भाग पर लगाया जाता है उसकी चौड़ाई को बढ़ाना पड़ता है, परन्तु लम्बाई वही रहती है। पाँचवे तार को आवश्यक रूप से बेसबार की और ही लगाया जाता है। इस तार को 'सी' (C) कहा जाता है तथा मन्द्र-सप्तक के 'सा' स्वर में मिलाया जाता है। कोई-कोई इसे अति मन्द्र-सप्तक के कोमल 'नि' में भी मिलाते हैं। क्रमानुसार तारों की तुलना से इसकी मोटाई सबसे ज्यादा होती है। अन्य सभी अवयव को चार तारवाले व्हायोलिन के समान ही रखा जाता है।

पाँच तारवाले व्हायोलिन में तरबें लगाने के लिए इसमें नेक के ब्लॉक, एण्ड पीन की ब्लॉक, बेसबार आदि की लम्बाई, चौड़ाई, एवं मोटाई को दुबारा बढ़ाया जाता है ताकि तरबों की तारों को वहन करने की क्षमता वाद्य में हो।

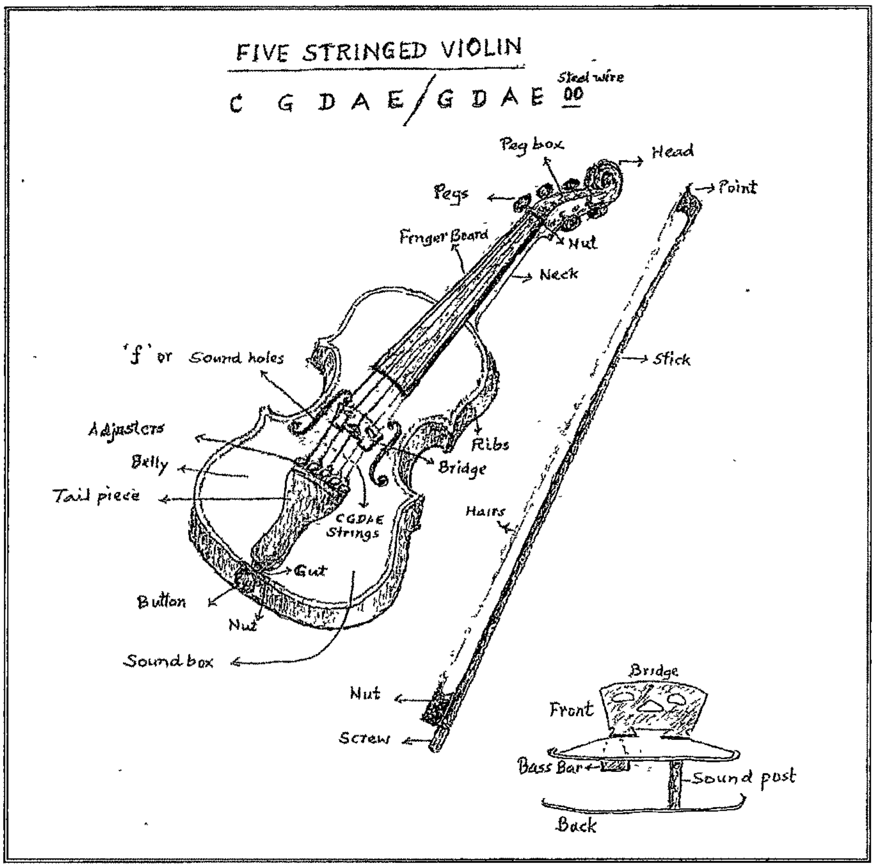

पाँच तारवाला व्हायोलिन

सन्दर्भ-सूत्र

1. भारतीय संगीत के तन्त्रीवाद्य - डॉ. प्रकाश महाडिक — पृष्ठ 149
2. -- वही -- — पृष्ठ 149
3. -- वही -- — पृष्ठ 150
4. श्री कृष्णचन्द्र मण्डल से साक्षात्कार के आधार पर, दिनांक : 17-04-2003, कोलकाता।
5. भारतीय संगीत के तन्त्रीवाद्य - डॉ. प्रकाश महाडिक — पृष्ठ 150
6. श्री मनोज कुमार सर्दार से साक्षात्कार के आधार पर, दिनांक : 10-04-2003, कोलकाता।
7. श्री कृष्णचन्द्र मण्डल से साक्षात्कार के आधार पर, दिनांक : 17-04-2003, कोलकाता।
8. प्रो. रॉबीन घोष से साक्षात्कार के आधार पर, दिनांक : 03-02-2005, कोलकाता।
9. संवीक्षण - सम्पादक : जयन्त राय — पृष्ठ 286